नियमसार जीव अधिकार, तीसरी गाथा। निमयसार की व्याख्या करते हैं। नियमसार अर्थात् क्या?

टीका : — यहाँ (इस गाथा में), 'नियम' शब्द को 'सार' शब्द क्यों लगाया है,... नियमसार है न? नियमसार—तो नियम को सार शब्द क्यों लगाया है, **उसके प्रतिपादन द्वारा...** सार (शब्द) नियम को क्यों लगाया, उसके कथन द्वारा **स्वभावरत्नत्रय का स्वरूप कहा है।** स्वभावरत्नत्रय अर्थात् क्या? त्रिकाल द्रव्यस्वभाव वह?

मुमुक्षु : आपने कल समझाया था।

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं, यह कहते थे, ये सब समझे नहीं थे। इसे अन्दर...

मुमुक्षु : यह पर्याय की बात है।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह तो पर्याय की बात है। समझ में आया या नहीं? कहाँ गये? प्रकाशदास! यह सब सुनना, समझने जैसा है। अध्धर का अध्धर शब्द पड़े, ऐसा नहीं चलता।

यह स्वभाव... नियमसार, यह तो पर्याय की व्याख्या है। नियमसार, वह मोक्ष का मार्ग पर्यायरूप, उसे सार क्यों लगाना पड़ा, उसका यह कथन है। स्वभावरत्नत्रय अर्थात् त्रिकाली स्वभाव नहीं। उसमें तो रत्नत्रय कहाँ था? वहाँ तो अनन्त चतुष्टय पड़ा है। पर्याय में-अवस्था में जो सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र निर्विकल्प दशा वीतरागी पर्याय हो, उसे यहाँ स्वभावरत्नत्रय कहा जाता है।

अब, इस नियमसार को कहने से पहले इस नियम का कारण कौन है? समझ में आया? नियमसार अर्थात् नियम अर्थात् मोक्ष का मार्ग। आत्मा सुख-चैतन्यवस्तु... इसका स्पष्टीकरण अन्दर करेंगे। परद्रव्य का आश्रय छोड़कर, स्वद्रव्य के अन्तर्मुख से जो सम्यग्दर्शन की प्रतीति होना, वह दर्शन। आत्मा के आश्रय से अन्दर ज्ञान होना, वह ज्ञान और उसमें लीनता होना वह चारित्र है। यह वर्तमान मोक्षमार्ग की (दशा) हुई। उसे सार क्यों लागू किया, उसके लिये कथन है। उस व्यवहार का इसमें परिहार है। अब यह जो नियम है, मोक्ष के मार्गरूप नियम अर्थात् पर्याय, अर्थात् अवस्था, उसका कारण कौन है? बहुत सूक्ष्म व्याख्या है। समझ में आया? यह तो कार्यनियमसार कहा, परन्तु उसका कारण नियम कौन? उसे नियमसार नहीं परन्तु कारणनियम कौन? पण्डितजी! आहा..हा..! अब कारणनियम की व्याख्या करते हैं। मगनभाई!

जो... य शब्द पड़ा है न? **'य' जो...** वह ऐसा कहेंगे। जो यह कारणनियमसार है। समझ में आया? **जो सहज परम-पारिणामिकभाव से स्थित...** आत्मा का अनादि-अनन्त परमस्वभावभाव, सहज ध्रुवस्वभावभाव, एक समय की वर्तमान मोक्षमार्ग की पर्यायरहित... समझ में आया? जो स्वभाविकपरमपारिणामिक (भाव) त्रिकाली स्वभावभाव, ध्रुवभाव, चैतन्यभाव, ज्ञायकभाव में परमपारिणामिकभाव से। वह पारिणामिकभाव होने पर भी... यह स्पष्टीकरण कल हो गया है नीचे। वह पारिणामिक पर्याय नहीं, परिणाम नहीं।

मोक्षमार्ग की पर्याय प्रगट हो या सिद्ध की पर्याय प्रगट हो, वह पर्याय यह पारिणामिकभाव वह नहीं। समझ में आया? वीतराग का मार्ग इतना सरस और सूक्ष्म है, सरस और सूक्ष्म है। आनन्द के रसवाला और सूक्ष्म है। जगत में बाहर से कल्पित किया है, वह मार्ग नहीं है। समझ में आया?

कहते हैं, जो स्वभाविक ध्रुव नित्य आत्मा का स्वभाव, जो स्वभाविक परमपारिणामिक (भाव) अर्थात् जिसे पर की कोई अभाव या सद्भाव की अपेक्षा नहीं है। कर्म के निमित्त का सद्भाव या अभाव की अपेक्षा नहीं है, ऐसा त्रिकाली ध्रुवस्वभाव। उसमें **स्थित...** ऐसे त्रिकाली वस्तु के स्वभाव में रहे हुए, रहे हुए **स्वभाव, अनन्त चतुष्टयात्मक...** यह ध्रुवस्वभाव है। पहले स्वभावरत्नत्रय कहा था, वह पर्याय थी। समझे? ऐसे बाहर से ऐसे के ऐसे (हाँ कहे) ऐसा यहाँ नहीं चलता। समझ में आया या नहीं?

यहाँ कहते हैं कि **स्वभाव, अनन्त चतुष्टयात्मक...** अर्थात्? आत्मा के मूल स्वभाव, नित्यस्वभाव, ध्रुवस्वभाव में। स्वभाव अनन्त ज्ञान अर्थात् जिसके ध्रुवस्वभाव में ज्ञानभाव है, वह ज्ञानभाव अनन्त है, अनन्त है, स्वभाव की शक्ति का सामर्थ्य अनन्त है। अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त आनन्द, अनन्त बल—ऐसा जो स्वाभाविक पारिणामिकभाव में रहे हुए ऐसे जो भाव वह **शुद्धज्ञानचेतनापरिणाम,...** इन चारों के समूह को वापस एकरूप गिन दिया। समझ में आया? मगनभाई! आहा..हा..! वस्तु नित्यध्रुव परमस्वभावभाव में रहे हुए ये चार ध्रुवभाव—अनन्त आनन्द, अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त बल का एकरूप शुद्धज्ञानचेतनापरिणाम। यह परिणाम भी पर्याय नहीं है। नीचे दो अर्थ किये हैं, देखो, पारिणामिकभाव की व्याख्या कल आ गयी।

अब **(२) इस शुद्धज्ञानचेतनापरिणाम में 'परिणाम' शब्द होने पर भी वह, उत्पाद-व्ययरूप परिणाम को सूचित करने के लिए नहीं है....** है? हरिभाई! यह बहुत सूक्ष्म है। आहा..हा..! कहते हैं, भगवान आत्मा पूर्ण, पूर्णस्वरूप ध्रुव नित्यभावस्वभाव, उस नित्यभावस्वभाव में रहे हुए अनन्त बेहद जिसका ज्ञानस्वभाव, आनन्द बेहद स्वभाव, अनन्त वीर्य और अनन्त दर्शन, ऐसे स्वरूपमय शुद्धज्ञानचेतनापरिणाम शुद्धज्ञानमयचेतना, ऐसा जो भाव, उस त्रिकाली भाव को यहाँ शुद्धानचेतनापरिणाम कहा जाता है। समझ में आया? कहो, पण्डितजी!

जो... ऐसा शब्द था न ? स्वाभाविक, स्वाभाविक वस्तु। क्षयोपशम, उपशम, क्षायिक है, वह तो पर्याय है। कर्म के अभावस्वभावरूप पर्याय है। वह यह नहीं; यह तो त्रिकाली स्वभावभाव है। आत्मा का त्रिकाली ध्रुवभाव, उसमें रहे हुए बेहद स्वभाव ज्ञान, दर्शन, आनन्द का एकरूप गिनकर शुद्धज्ञान, उसे ज्ञान की प्रधानता देकर अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त आनन्द, अनन्त वीर्य है, तथापि उसका एकरूप गिनकर उसे शुद्धज्ञानचेतना -परिणाम कहा गया है। कहो, समझ में आया ? वह शुद्धज्ञानचेतनापरिणाम जो है, वह ऐसा, वह नियम है। उसका नाम त्रिकाली नियम है, यह नियमसार जो कहते हैं, वह तो पर्याय है परन्तु उस पर्याय का कारण त्रिकाल कौन है, उसका यह वर्णन है। समझ में आया ?

जो स्वाभाविक परम स्वभावभाव में स्थित, स्वाभाविक अनन्त चतुष्टयस्वरूप स्वाभाविक शुद्धज्ञानचेतनापरिणामभाव वह नियम-कारणनियम है। नीचे (फुटनोट में) तीन (का अंक) किया है। **यह नियम, सो कारणनियम है...** कारणनियम अर्थात् जो मोक्ष का मार्ग सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र सच्चा / सत्यमार्ग-पर्याय का कारण यह नियम है। समझ में आया ? उसका कारण व्यवहाररत्नत्रय नहीं है, ऐसा यहाँ सिद्ध करना है, भाई ! गजब काम, भाई ! समझ में आया ?

सर्वज्ञ परमेश्वर भगवान तीर्थंकरदेव ने जो यह आत्मा ध्रुवस्वरूप, ध्रुवस्वरूप है, जिसकी वर्तमानदशा का परिणमन, एक समय की दशा, उससे रहित चीज़ जो ध्रुव है, उत्पादव्ययध्रुवयुक्तं सत्, ऐसा कहा है। उसमें की यह जो उत्पाद-व्यय की पर्याय जो मोक्षमार्ग की है, उसका कारण कौन ? ऐसा यहाँ सिद्ध करना है। कहो, चन्दुभाई ! कल नवरंगभाई कहते थे। चन्दुभाई क्यों ऐसे में नहीं आते ? स्वरूपचन्दभाई ! देखो ! यह तुम्हारे घर की बातें हैं। आहा..हा.. ! अरे ! वीतरागमार्ग क्या है, यह इसने सुना न हो, इसके ख्याल में आया न हो, समझा न हो और इसे धर्म हो जाये, (ऐसा नहीं हो सकता)। क्या हो ? अनादि से जगत लुटता है। धर्म के नाम पर भी लुटता है।

मुमुक्षु : प्रसन्न होता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : प्रसन्न होता है और उसमें खुश होता है, लुटता है। ले गये तो हल्का हो गया। वस्त्र और गहने भार ले गये न, (इसलिए) हल्का हो गया। आहा..हा.. ! अरे भगवान ! यह तेरे सम्यग्दर्शन की रीति अलग है, भाई ! समझ में आया ?

यह सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र तो निर्विकारी, वीतरागी निर्दोष आनन्ददायक पर्याय है, परन्तु उस पर्याय का कारण जो यह नियम शब्द पड़ा है न? अर्थात् कि यह नियमसार जो मोक्षमार्ग है, उसका कारण कौन? क्योंकि नियमसार में तो ऐसा शब्द आया कि सार है, वह व्यवहारनय का अभाव बताता है। समझे? तब अब यह नियम का व्यवहार कारण नहीं, तब उस मोक्षमार्ग के नियम का कारण कौन? नवरंगभाई! उसका कारण त्रिकाली भगवान आत्मा का स्वभाव, शुद्धज्ञानचेतनापरिणाम। चेतना अर्थात् ज्ञान में एकाग्र, ऐसा जो त्रिकाली स्वभाव, हों! जो वह यह नियम है। मोक्षमार्ग की दशा के कारणरूप से इसे नियम कहा जाता है। समझ में आया? आहा..हा..! नीचे कहा है न? यह परिणाम **पर्यायार्थिकनय का विषय नहीं है; यह शुद्धज्ञानचेतनापरिणाम तो उत्पाद-व्ययनिरपेक्ष एकरूप है...** क्या कहा? त्रिकाली सदृशरूप है। अभी समझना कठिन (पड़े) वह क्या कहते हैं?

वस्तु जो है आत्मा नित्य ध्रुव, वह सदृश जिसका एकरूप है। उपजना, विनशना, ऐसी उत्पाद-व्यय की पर्याय का जिसमें अभाव है। समझ में आया? आहा..हा..! वह **द्रव्यार्थिकनय का विषय है।** शुद्धज्ञानचेतनापरिणाम द्रव्यनय का विषय है, पूरे द्रव्य को बतावे वह विषय है। उसमें परिणाम का भेद बतावे, वह है नहीं। समझ में आया? आहा..हा..!

जिसे धर्म करना हो, सम्यग्दर्शन पहले में पहले (करना हो) तो उसे क्या करना? उसे किसको कारण बनाना, इसकी बात चलती है। समझ में आया? देव-गुरु-शास्त्र कारण होंगे? व्यवहाररत्नत्रय, दया, दान, विकल्प आदि कारण होंगे? उस पर्याय का पर्याय कारण? यह निश्चय से, यह और दूसरी बात, परन्तु उस पर्याय का दूसरा कारण है?

मुमुक्षु : आश्रय किसका?

पूज्य गुरुदेवश्री : आश्रय किसका? किसके कारण से वहाँ से आयी यह अवस्था? समझ में आया? त्रिकाली ध्रुवस्वभाव, परमस्वभावभाव में रहे हुए अनन्त चतुष्टय के एकरूप शुद्धज्ञानचेतनापरिणाम - ऐसा जो ध्रुवभाव, वह सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र का वह कारण है। समझ में आया? बड़ा विवाद करते हैं न? छहढाला में आता है न? व्यवहार हेतु है, नियम का-निश्चय का कारण है। यह तो एक निमित्तरूप से क्या था, उसका ज्ञान कराने के लिये कहा जाता है। व्यवहार के कथन वे सब अन्यथा कथन हैं।

वास्तविक कारण तो भगवान आत्मा धर्म की सम्यग्दर्शनदशा, पहली दशा का नियम त्रिकाली वस्तु वह कारण है। नियम से वह नियम कारण है अथवा उस नियम का नियम से यह नियम कारण है। समझ में आया?

सो नियम (कारणनियम) है। लो! पाठ में ये शब्द नहीं हैं। पाठ में तो मोक्ष के मार्ग की पर्याय सम्यग्दर्शन-ज्ञान की निर्विकारी (पर्याय), स्वभाव के आश्रय से हुई, उसकी व्याख्या है। परन्तु उसकी व्याख्या में से निकाला है। अमृतचन्द्राचार्य की ऐसी शैली है, वैसी इन आचार्य (मुनिराज) पद्मप्रभमलधारिदेव ने (की है)। कार्यनियम की बात है तो उसमें से कारणनियम निकाला है। समझ में आया? आहा..! यह नियम, वह कारणनियम है।

तीन अर्थ की व्याख्या चली है। परमपारिणामिकभाव, वह उत्पाद-व्यय नहीं; ध्रुव है। पारिणामिकभाव शब्द होने पर भी। दूसरा परिणाम शब्द होने पर भी, वह पारिणामिकभाव होने पर भी उसे उत्पाद-व्यय-पर्याय लागू नहीं पड़ती। अब यहाँ परिणाम शब्द लागू पड़े, उसमें भी नयी अवस्था उत्पन्न हो और (पुरानी) जाये, इसकी अपेक्षा लागू नहीं पड़ती। तीसरा, वह नियम है। नियम अर्थात् त्रिकाली कारणनियम है। समझ में आया? प्रकाशदासजी! यह ऐसा का ऐसा हाँकते जाते हैं घण्टे में, ऐसा नहीं है यह।

मुमुक्षु : गुरु समझावे, कितना समझाये?

पूज्य गुरुदेवश्री : ऐसा है। यहाँ कहते हैं कि समझाने में गुरु नहीं, गुरु की ओर का विकल्प नहीं और विकल्प के साथ जाननेवाले की पर्याय (हुई) वह भी नहीं, ऐसा कहते हैं। मगनभाई! आहा..हा..! गुरुदेव तो पर रहे, वे नहीं; उनकी श्रद्धा का विकल्प राग है, वह नहीं, परन्तु त्रिकाली को जाननेवाले ज्ञान का जो अंश है, वह भी नहीं। कहो, समझ में आया? ऐसा मार्ग इसने वीतराग में-वाड़ा में जन्मने पर भी अरे! इसे हाथ नहीं लगता, अभी सुनने को नहीं मिलता, वह समझे कब? श्रद्धा-समकित कब करे? बाहर ही बाहर में भटकाभटक (करता है)। समझ में आया?

कहते हैं कि नियम अर्थात् मोक्ष का मार्ग। इसे कारण में तो त्रिकाली द्रव्य कारण है। उसके कारण में व्रत, तप, पूजा, भक्ति और राग की मन्दता की क्रिया, वे उसके कारण में नहीं हैं, भाई! स्वरूपचन्दभाई! है न इसमें? अब इस कारणनियम की व्याख्या हुई।

गाथा में इसकी नहीं थी। अब गाथा में है, उसकी व्याख्या चलती है। समझ में आया? गाथा में विशेष मोक्षमार्ग की व्याख्या थी, उसमें से सामान्य द्रव्य निकाला। त्रिकाली ध्रुव भगवान आत्मा, वह मोक्ष के मार्ग की विकाररहित पर्याय की कारण-दशा वह त्रिकाल वस्तु है, त्रिकाल वस्तु वह कारण है। आहा..हा..!

ऐसा स्पष्ट एक और एक दो जैसा स्पष्ट, कहीं सन्देह को स्थान नहीं होता, यह व्याख्या सन्तों के बिना, दिगम्बर सन्तों के बिना कहीं यह बात नहीं है। पण्डितजी! परन्तु पढ़ते भी नहीं आता, वापस पढ़ते नहीं, ऐसे के ऐसे हाँकते रहते हैं। बापू! यह तो अध्यात्म की बातें हैं, भाई! अनन्त काल में इसने तो साधुपना व्रत, नियम और तपस्या अनन्त बार की है, वह कहीं धर्म नहीं। वह तो विकल्प की क्रिया, राग की, पुण्य की, विकार की है। उस विकार की क्रिया के कारण से आत्मा को कुछ लाभ होता है, ऐसा नहीं है, ऐसा कहते हैं। आहा..हा..! परन्तु निर्विकारी आत्मा की जो मोक्षमार्ग की पर्याय है, उसे प्रगट होने की भूमि / स्थान तो त्रिकाल द्रव्य है। पाताल कुएँ में वह सब है। आहा..हा..! समझ में आया?

अब कार्यनियम (की व्याख्या)। पहली नियम—कारणनियम-त्रिकाल ध्रुव की व्याख्या हुई। नीचे (फुटनोट-३) है न? **यह नियम, सो कारणनियम है क्योंकि वह सम्यग्ज्ञानदर्शनचारित्ररूप...** इसमें ज्ञानशब्द पहले आया है। इसने शैली पहली आती है न! भाई! ज्ञान-दर्शन-चारित्र। पहला ज्ञान आता है। पहला अर्थ यह करे न? पाठ में है वैसा करे। समझ में आया? **सम्यग्ज्ञानदर्शनचारित्ररूप कार्यनियम का...** कार्यनियम अर्थात् वर्तमान दशा, मोक्षमार्ग की वीतरागदशा, ऐसा जो **कार्यनियम का कारण है।** वह त्रिकाली द्रव्यस्वरूप, ध्रुवस्वरूप वह मोक्ष के आनन्ददायक धर्म की पर्याय का कारण है। **(कारणनियम के आश्रय से कार्यनियम प्रगट होता है।)** कोष्ठक में डाला है।

त्रिकाली भगवान ध्रुव में दृष्टि देने से, उसका आश्रय लेने से त्रिकाली सहज परमस्वभावभाव में ज्ञान की पर्याय, श्रद्धा की पर्याय को पकड़ाने से उसे सम्यग्दर्शनज्ञान की दशा प्रगट होती है। ऐसी बात थी तुम्हारे यहाँ? लो! इसने वहाँ श्वेताम्बर की सभी क्रियायें बहुत की। अभी गर्म पानी रखता है। गर्म पानी और यह उपधान और क्या सब...? हैरान होने का मार्ग है। आंबेल की ओलियो। एक अलोना व्रत और एक अपवास, एक अपवास और दो आंवेल। एक अपवास और तीन आंवेल, एक अपवास और सौ आंवेल।

अरे! परन्तु भाई! अभी मूल-वर पकड़े बिना तेरी बारात कहाँ जायेगी? तत्त्व की दृष्टि क्या है? वस्तु का मूल धर्म का क्या है? उस मूल का मूल क्या है? चारित्र धर्म है, उसका मूल सम्यग्दर्शन। बराबर है? है न सामने? दंसणमूलोधम्मो।

धर्म अर्थात् चारित्र; वीतरागभाव वह चारित्र है। उसका मूल सम्यग्दर्शन है। उसका मूल कारणनियम है। आहा..हा..! पूर्णानन्द का नाथ तेरा भगवान पूर्ण एक समय में पड़ा है, प्रभु! जिसे बदलने की-उत्पाद-व्यय की अपेक्षा ही नहीं। आहा..हा..! ३२० में तो ऐसा कहे, मोक्षमार्ग जिसमें नहीं। भले उसे मोक्षमार्ग का कारण कहा, परन्तु मोक्षमार्ग उसमें नहीं। उसमें तो इनकार किया है, कारण का इनकार किया है। ३२० गाथा में। समझ में आया? ३२० गाथा सुनी है? अभी कहाँ सुने, भटकने गये थे। ३२० गाथा नयी आयी।

मुमुक्षु : सम्यग्दर्शन का कारण कारणनियम।

पूज्य गुरुदेवश्री : कारणनियम ध्रुव। क्या कहना है? यह सुनकर कहते हैं। पहले कहाँ सुना था वहाँ? कहाँ सुना था। ३२० गाथा कहाँ सुनी थी, ऐसा कहता हूँ। आहा..हा..!

अब, कार्यनियम अर्थात् मोक्ष का मार्ग-पर्याय-दशा, सम्यग्दर्शन आनन्ददायक पर्याय, सम्यग्ज्ञान आनन्ददायक पर्याय, चारित्र आनन्ददायक पर्याय। ऐसी जो मोक्षमार्ग की पर्याय, वह कार्यनियम है। अर्थात्? उसका कार्य मोक्ष, उसकी यहाँ बात नहीं है अभी। यह तो स्वयं कार्यनियम इसकी मोक्षमार्ग की पर्याय, जो मोक्ष का कारण और जिसका कार्य मोक्ष, उसका कारण जो मोक्षमार्ग, उसे यहाँ कार्यनियम कहा है। समझ में आया? इसमें कितने शब्द याद रखना।

एक ओर कहे कि निश्चय मोक्ष का मार्ग, कारण; मोक्ष, कार्य। दूसरा अब मोक्षमार्ग पर्याय है, वह कार्य, उसका कारण त्रिकाल द्रव्य। समझ में आया? कार्यपरमात्मा तो तेरहवें (गुणस्थान में) आवे। कार्यनियम तो चौथे से शुरु हो। त्रिकाली वस्तु जो कारणनियम है, उसके आश्रय से प्रगट होनेवाली मोक्ष के मार्ग की पर्याय को यहाँ कार्यनियमरूप से कहा गया है। उसका वापस कार्य, उस कार्यनियम का कार्य जो मोक्ष, वह और दूसरी बात है। आहा..हा..!

(कार्यनियम), अर्थात् निश्चय से (निश्चित) जो करनेयोग्य... देखो! उस नियम में करनेयोग्य कुछ नहीं था, वह तो है, उसे करना क्या? क्या कहा? त्रिकाली

ध्रुवस्वभाव परमपारिणामिकभाव शुद्धज्ञानचेतनापरिणामभाव है.. है.. है.. है.. है.. उसे करना क्या ? अब उसके आश्रय से जो करने की दशा है, वह करनेयोग्य है। उसमें विकल्प करनेयोग्य है या पर में करनेयोग्य है, यह बात नहीं आयी इसमें ?

(निश्चित) जो करनेयोग्य... पाठ है न ? मूल पाठ **णियमेण य जं कज्जं** जो जीव को नियम से करनेयोग्य है, वह। **प्रयोजनस्वरूप हो वह,... (निश्चित) जो करनेयोग्य-प्रयोजनस्वरूप हो वह, अर्थात् ज्ञान-दर्शन-चारित्र। इन तीनों में से प्रत्येक का स्वरूप कहा जाता है...** समझ में आया ? भगवान आत्मा... देखो ! कारणनियमरूप त्रिकाली, उसमें से कार्यनियम मोक्ष का मार्ग, निश्चयमोक्षमार्ग को यहाँ कार्यनियमरूप से कहकर, वह कार्यनियम करनेयोग्य है, कहते हैं। करनेयोग्य है, इसलिए कार्य कहा न उसे ? वस्तु त्रिकाली है, उसमें करनेयोग्य क्या होगा ? वह तो है। पर्याय में करनेयोग्य तो यह करनेयोग्य है, कहते हैं। निश्चय से करनेयोग्य हो तो निश्चयसम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, वह पर्याय करनेयोग्य प्रयोजनभूत निश्चय से करना हो तो वह करनेयोग्य है। समझ में आया ? लो ! इसमें कुछ करने का आया या नहीं ? इसमें मुझे करना क्या, सूझ नहीं पड़ती। आहा..हा.. !

मुमुक्षु : तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनं यह.....

पूज्य गुरुदेवश्री : यह तत्त्वार्थश्रद्धान कहो या यह कहो, दोनों एक ही हैं। समझ में आया ? तत्त्वार्थ अर्थात् नव इकट्ठे ऐसा नहीं। एक तत्त्व का अन्दर भान होने पर आठों ही तत्त्वों का उसमें अभाव है, ऐसा भान हो जाता है, इसका नाम तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शन है। (यह) ऐसा कहते हैं, नौ जानना पड़ेंगे ? यहाँ तो नौ को जानने की बात भी इसमें नहीं है, ऐसा कहते हैं। यहाँ तो यह जाना, इसलिए वे ज्ञात हो जायेंगे - ऐसा कहते हैं। क्या (कहा) ? एक को जाना तो दूसरे रागादि इसमें नहीं है, ऐसा ज्ञात हो जायेगा - ऐसा कहते हैं। समझ में आया ? गजब व्याख्या, भाई ! दो लाईन, तीन लाईन में कितना समाहित कर दिया, देखो न ! स्वरूपचन्दभाई ! आवे तब आवे। इसमें तो इस शब्द का तो बराबर भाव आता है। ए.. वजुभाई !

इसमें पहले कहा था कि जो त्रिकाल नियम है, उसे सार लागू नहीं पड़ता। क्योंकि स्वयं ही वस्तुस्वरूप है। इसलिए करना है, उसमें सार लागू पड़ता है कि राग करना नहीं और राग का अभाव है उसमें। समझ में आया ? गजब बातें, भाई ! ये सेठ बेचारे क्या धर्म

तो समझें नहीं, फिर यह व्रत करो, और अपवास करो, यात्रा करो और भक्ति करो, पूजा करो और सोलभथ्था। क्या कहलाता है ? षोड़श कारणभावना। यह तो सब विकल्पों में चला गया बेचारा। वास्तविक तत्त्व की श्रद्धा के भान बिना ये सब भटकने के रास्ते हैं। आहा..हा.. ! उसे मोक्ष के मार्गरूप में माने, छूटने के (मार्ग) माने। अरे ! मार्ग तो मार्ग है। उसकी पद्धति की खबर नहीं होती और उस पद्धति के बिना साधने जाये तो कुछ का कुछ साधे और माने कुछ।

भगवान आत्मा परमेश्वर त्रिलोकनाथ सर्वज्ञदेव फरमाते हैं, भाई ! तेरा त्रिकाली ध्रुवस्वभाव है, उसे कारण कहते हैं क्योंकि कारण में से मोक्षमार्ग की पर्याय प्रगट होती है। व्यवहाररत्नत्रय के विकल्प में से वह मोक्षमार्ग कहीं नहीं आता। आहा..हा.. ! कितनी बात है ! इसके बदले (कहे) व्यवहार पहला और फिर निश्चय हो। वह तो सब व्यवहार की कथन की शैली दूसरी है पूरी। यह तो छठवें गुणस्थान की दशा में विकल्प आदि होते हैं, उनका अभाव करके सातवाँ (गुणस्थान) पाता है, यह बताने के लिये वहाँ बात की है। अभाव करके। बाकी वस्तु ही कारण है। वीतरागदशा की श्रद्धा आत्मा की, वीतरागस्वरूप आत्मा के आश्रय से होनेवाला वीतरागी सम्यग्दर्शन, उसे राग का भाव कारण हो, ऐसा नहीं होता, भाई ! यह तो कल आ गया, शुद्धरत्नत्रय परमनिरपेक्ष है। समझ में आया ?

जो (कार्यनियम), निश्चय से करनेयोग्य... णियमेण य जं कज्जं तब हमें क्या करना ? यह निश्चय से करनेयोग्य हो तो निश्चयसम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, वे करनेयोग्य हैं। व्यवहारसम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का विकल्प वह करनेयोग्य नहीं है। आहा..हा.. ! समझ में आया ? (व्यवहाररत्नत्रय का विकल्प) आवे, (वह) अलग बात है और करनेयोग्य है, वह अलग बात है। समझ में आया ? निश्चयसम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की भूमिका में देव-गुरु-शास्त्र का व्यवहार आवे, परन्तु करनेयोग्य, वह अलग वस्तु है और आ जावे, उसे जाननेयोग्य है, वह अलग वस्तु है। गजब मार्ग अन्दर, भाई ! आहा..हा.. !

जहाँ कहीं विकल्प पहुँचे नहीं, वाणी पहुँचे नहीं, देव-गुरु की वाणी की ध्वनि वहाँ स्पर्शे नहीं। आहा..हा.. ! और वाणी के लक्ष्य से हुआ विकल्प, वह जहाँ अन्दर जा सके नहीं, उसके कारण से सम्यग्दर्शन हो, ऐसी चीज़ है नहीं। वस्तु ऐसी नहीं है, ऐसा कहते हैं। आहा..हा.. ! पण्डितजी ! नियमसार पहले देखा था या नहीं ? नियमसार कभी देखा

था ? आहा..हा.. ! गजब बात है ! केवली का पिटारा खोला है पूरा ! भगवान ! तुझमें क्या कमी है कि तुझे पर की शरण (लेना पड़े) ? रागादि तो पर है, उनकी शरण तुझे लेना पड़े ? शरण तो आत्मा त्रिकाली है, उसकी शरण ले। उसकी शरण में फिर तुझे दर्शन-ज्ञान-चारित्र होंगे। आहा..हा.. ! उस सम्यग्दर्शन की शरण से भी सम्यक्चारित्र नहीं होगा। समझ में आया ? सम्यग्दर्शन, उसका शरण ध्रुव; सम्यग्ज्ञान का शरण ध्रुव; सम्यक्चारित्र का शरण ध्रुव। सम्यग्दर्शन, चारित्र का कारण नहीं होता। जो व्यवहार कारण कहा है, वह अलग बात है। बन्ध अधिकार। वह तो वहाँ चारित्र, सम्यग्दर्शन के बिना नहीं होता, इतना सिद्ध-बताने को (कहा है)। वापस सब ख्याल है, वहाँ कारण कहा है ? बन्ध अधिकार में कहा है न ? परन्तु वास्तव में तो चारित्र-स्वरूप के आनन्द की रमणता, उस कार्य का कारण तो त्रिकाली द्रव्यस्वभाव है। आहा..हा.. ! समझ में आया ? बहुत सूक्ष्म ऐसा।

मुमुक्षु : सम्यग्दर्शन हुआ हो, उसे मोक्ष होता ही है, हाथ पकड़कर ले जाता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु सम्यग्दर्शन में यह आया या नहीं ? कि स्वरूप की स्थिरता करेगा तब होगा - ऐसा आया या नहीं श्रद्धा में ?

मुमुक्षु : यह तो आता ही है।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, तो हाथ पकड़कर ले जाये, कहाँ आया वापस यह ? आहा..हा.. !

मुमुक्षु : उसमें उतावल करने की क्या आवश्यकता है ?

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु उतावल की व्याख्या क्या ?

मुमुक्षु : उतावल नहीं परन्तु धीरज रखने की तो आवश्यकता है न ?

पूज्य गुरुदेवश्री : सम्यग्दर्शन में कारणरूप त्रिकाली द्रव्य हुआ। अब उसकी श्रद्धा में क्या आया ? (यही) कि इसके कारण से मुझे दर्शन हुआ। अब ज्ञान भी इसके कारण से होगा, चारित्र भी इसके कारण से होगा - ऐसा श्रद्धा में आया है। श्रद्धा में आया है, फिर आधीरज और चिन्ता का कहाँ प्रश्न है। वह आत्मा की शरण लेगा ही। उग्ररूप से पहले लिया है तो चारित्र के लिये उग्ररूप से लेगा ही। देवानुप्रिया ! अन्तर की श्रद्धा में ही यह आया है कि इस द्रव्य के आश्रय से ही मुझे चारित्र होगा। थोड़ा (चारित्र) तो साथ में हुआ। सम्यग्दर्शन में आत्मा का आश्रय होकर प्रतीति-अनुभव हुआ, ज्ञान और स्वरूपस्थिरता तो हुई, चारित्र का अंश तो साथ में आया ही है, परन्तु दर्शन में प्रतीति होने पर (ऐसा होता है

कि) इसका अनुष्ठान करूँगा। नहीं आता भाई! (समयसार गाथा) १७-१८ ? १७-१८ गाथा, समयसार। आता है, १७-१८ में यह आता है कि यह मैं, यह श्रद्धा ऐसी आती है कि देखो! है न ? इसका अनुसरण करने से मुझे चारित्र होगा, मोक्षमार्ग होगा, मोक्ष होगा, ऐसा। समझ में आया ?

यहाँ देखो! मोक्षार्थी पुरुष को प्रथम तो आत्मा को जानना चाहिए। जानना अर्थात् अनुभव करना, वह जानना, हों! फिर उसका श्रद्धान करना और श्रद्धान करना अर्थात् कि यही आत्मा है, इसका आचरण करने से अवश्य कर्मों से छूटा जा सकेगा। वहाँ अब फिर उसका आचरण करना। समझ में आया ? १७-१८ में पहले ज्ञान करना, दर्शन (फिर होता है), विवाद उठा है न मुम्बई में ? पहले जाने बिना श्रद्धा किसकी करेगा ? ऐसा कहते हैं। समझ में आया ? बात बाहर आने पर तो बहुत सब सूक्ष्म चर्चा चलती है, बात चलती है, किसी में भूल भी पड़ जाये साधारण।

कहते हैं, **करनेयोग्य-प्रयोजनस्वरूप हो वह,...** उसे निश्चय से करनेयोग्य कहा, वह **ज्ञान-दर्शन-चारित्र।** लो! कहो, यहाँ पहले ज्ञान लिया। वहाँ १७-१८ में पहले ज्ञान लिया। ज्ञान, दर्शन और चारित्र—आत्मा का ज्ञान, आत्मा का दर्शन और आत्मा का चारित्र, उसे यहाँ मोक्ष का मार्ग कहा है। समझ में आया ? यहाँ तो अभी देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा का ठिकाना नहीं होता। कुदेव-कुगुरु-कुशास्त्र को मानना... आहा..हा..! समझ में आया ? देवी-देवलों को मानना, पद्मावती और भैरवनाथ और अमुकनाथ... आहा..हा..! बहुत मिथ्यात्वभाव कहीं रह गया है। क्षेत्रपाल और यह पाल... अरे भगवान! असंख्यप्रदेशी क्षेत्रपाल तो भगवान तू है। आहा..हा..! यहाँ तो कहते हैं कि ऐसे देव-देवला की बातें भी नहीं, परन्तु साक्षात् सर्वज्ञदेव को-तीर्थंकर को माने तो भी वह विकल्प है और वह विकल्प सम्यग्दर्शन का कारण नहीं है। बराबर है ? अरे! इसे खबर नहीं होती, अभी खबर बिना यह पुरुषार्थ कहाँ करे और कहाँ जाये ?

अरे रे! जगत लुटाया है, हों! सच्ची बात बाहर आने पर लोगों को ऐसी लगे अन्दर से कि अरे रे! बापू! यह तुम्हारी बातें सब खबर नहीं हमको ? शास्त्र क्या कहते हैं यहाँ ? ऐसे व्यवहार के क्रियाकाण्ड तो अनन्त बार किये। मिथ्यात्वभाव तो साथ में रहा, क्योंकि राग की क्रिया से लाभ होता है, (ऐसा) मिथ्यात्व के साथ पुण्य बँधा (और) स्वर्ग आदि मिले, भेष पलटा परन्तु भाव नहीं पलटा। आहा..हा..!

मुमुक्षु : चार गति के दरवाजे खुल गये।

पूज्य गुरुदेवश्री : इसकी योग्यता से खुल गये।

मुमुक्षु : यहाँ तो मोक्ष का दरवाजा खोलने की बात है।

पूज्य गुरुदेवश्री : तीनों में से प्रत्येक का स्वरूप कहा जाता है —तावत् तेषु त्रिषु संस्कृत है न? **तेषु त्रिषु** उसमें दूसरा आता है, इन तीन का कहेंगे। वह अलग। चौथी गाथा में (आता है) **चारित्राणां त्रयाणां प्रत्येकप्ररूपणा भवति।** अब वहाँ अलग बात है, यहाँ अलग बात है। वहाँ प्रत्येक की प्ररूपणा अलग करूँगा, यह भेद की-व्यवहाररत्नत्रय की बात है और यहाँ तीन में से एक-एक की बात निश्चय की है। शब्द एक के एक हैं। पण्डितजी! उसमें कहा न? **त्रयाणां प्रत्येकप्ररूपणा भवति।** चौथी में-व्यवहार में। यहाँ ऐसा नहीं है, यहाँ तो **तेषु त्रिषु** इसमें से तीन वस्तु जो सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र—मोक्ष का मार्ग, उसे हम कहेंगे। समझ में आया?

अब पहली सम्यग्दर्शन की व्याख्या... सम्यग्ज्ञान की। इसमें ज्ञान है न, पहला। उसमें भी देखो? शब्द कैसे हैं? **(१) परद्रव्य का अवलम्बन लिए बिना...** परद्रव्य की ग्राहकता, रमकता शीघ्रता से छोड़। आया है या नहीं? ऐई! देवानुप्रिया! कहाँ लिखा है? दूसरा कहा वह दूसरा था। यह कहाँ सुनता है? इसे जो धुन हो... दूसरा कहा था देवानुप्रिया! श्रीमद् में ऐसा आता है कि परद्रव्य की ग्राहकता शीघ्र से तजो। कहाँ आता है, तुम्हें खबर नहीं, व्यर्थ का आता है। सत्रहवें वर्ष में, नयी पुस्तक में आता है। पुरानी पुस्तक में नहीं आता। पुस्तक बाहर रखी है।

परद्रव्य का अवलम्बन लिए बिना... सीधा पहला धमाका। कहते हैं कि देव-गुरु-शास्त्र और उनकी श्रद्धा का विकल्प, वह सब परद्रव्य है। कितना स्पष्ट किया है, देखो न! पद्मप्रभमलधारिदेव, पंच महाव्रतधारी महाभावलिंगी सन्त। उनकी टीका भी अभी कितनों को खटकती है। मिथ्या सिद्ध करना चाहते हैं। धीरे-धीरे कुन्दकुन्दाचार्य को मिथ्या सिद्ध करेंगे। भाई! ऐसा तो कहते थे न? फूलचन्दजी कहते थे। बापू! मार्ग तो यह है, भाई!

मुमुक्षु : इस बात का स्वीकार न करे, वे मूल गाथा का स्वीकार नहीं करते।

पूज्य गुरुदेवश्री : ऐसा ही है। मूल गाथा का ही यह विशेष है। सामान्य का विशेष है; विशेष न माने तो सामान्य तो नहीं मानता, ऐसा ही है। क्या हो? अरे रे!

कहते हैं, सम्यग्दर्शन किसे कहना? धर्म का पहला अवयव, मोक्ष का मार्ग-अवयव। **परद्रव्य का अवलम्बन लिए बिना....** लो, यहाँ तो मूर्ति को अवलम्बनकर सम्यक्त्व होता है और अमुक के कारण सम्यक्त्व होता है और... आते हैं न दूसरे बोल? वेदनीय (वेदना) से होता है। नहीं आता? वह तो यहाँ हुआ तब निमित्त कौन (था)? वहाँ से लक्ष्य छूटा था, उसकी व्याख्या की है। वेदना से होता है, देवदर्शन से, देवऋद्धि से होता है, लो! आता है या नहीं? सर्वार्थसिद्धि (तत्त्वार्थसूत्र की टीका) में कहीं? वे तो निमित्त के कथन हैं। यहाँ तो इनकार करते हैं। देखो! परद्रव्य के अवलम्बन से सम्यग्दर्शन नहीं होता; स्वद्रव्य के अवलम्बन से हुआ, तब लक्ष्य किससे छूटा था, उस चीज़ का ज्ञान कराया वहाँ। भारी काम। अरे..! अर्थ करने में विवाद।

मुमुक्षु : णमो अरिहंताणं में भी आता है। अरिहन्त अर्थात् अरि-शत्रुओं का जिन्होंने नाश किया है। नास्ति का कथन है।

पूज्य गुरुदेवश्री : क्या आया? नास्ति का कथन है तो क्या है? उसमें से अस्ति ले लेना। स्वभाव का आश्रय करे, तब राग की उत्पत्ति नहीं होती, उसे 'राग का नाश किया'—ऐसा कहा जाता है। उसमें से ऐसा ले लेना। कार्यहिंसा की बात है, परन्तु कारण निकाला है या नहीं? बस, अन्दर से अस्ति निकाली है।

(१) परद्रव्य का अवलम्बन लिए बिना निःशेषरूप से अन्तर्मुख योगशक्ति में उपादेय.... स्वयं अब आत्मा लिया। समस्तरूप से अन्तर्मुख उपयोग शक्ति में से। आहा..हा..! **(उपयोग को सम्पूर्णरूप से अन्तर्मुख करके...)** ऐसा। ज्ञान की दशा को अन्तर्मुख, अत्यन्त अन्तर्मुख करके। वस्तु के स्वभावसन्मुख करके। **(अन्तर्मुख करके ग्रहण करनेयोग्य) — ऐसा जो निज परमतत्त्व का परिज्ञान (जानना) सो ज्ञान है।** देखो! निज ज्ञान ग्रहण करनेयोग्य कहा। पर्याय को; यहाँ तो भाषा ऐसी है। समझ में आया? **'निजपरमतत्त्वपरिज्ञानम् उपादेयं भवति।'**

प्रगट करनेयोग्य है; इसलिए उसे उपादेय कहने में आया, वरना तो निश्चय में उपादेय तो ध्रुव है, परन्तु ध्रुव के आश्रय से निःशेषरूप से-समस्तरूप से अन्तर में पूरा उपयोग ही अन्तर में झुका लेना, ऐसा कहते हैं। आहा..हा..! बिल्कुल पर्याय को छूना नहीं, विकल्प को छूना नहीं। आहा..हा..! उस पर्याय को अन्तर्मुख सम्पूर्णरूप से, सम्पूर्णरूप

से एकदम द्रव्यस्वभाव में झुकाये, उसे समकित होता है। आहा..हा..! समझ में आया? अभी सम्यक् कैसे हो—उसकी खबर नहीं होती। सम्यक् न हो और उसे हो गया चारित्र, व्रत और तप... अरे! जिन्दगी जायेगी, भाई! ऐसा अवसर फिर से मिलना कठिन है। बाकी दुनिया की दरकार छोड़कर सत्य क्या है, उसे समझ ले। दुनिया कैसे माने, उसके साथ चलेगा तो मेल नहीं खायेगा। तुलना करना नहीं - ऐसा आया था। रमेश में भी आता है - दूसरे के साथ मार्ग की तुलना करना नहीं। मिढवणी समझ में आया? तुलना। भगवान वीतराग का-परमेश्वर का मार्ग, इस वीतराग के मार्ग के साथ में दूसरे के साथ तुलना करना नहीं।

भगवान आत्मा शुद्ध चैतन्य द्रव्य ध्रुव भगवान को समस्त प्रकार से अन्तर उपयोग करके पकड़। आहा..हा..! समझ में आया? **परद्रव्य का अवलम्बन लिए बिना निःशेषरूप...** अर्थात् समस्त प्रकार से - ऐसा कहते हैं। पूर्ण रीति से उपयोग को सम्पूर्णरूप से अन्तर में झुकाकर **योगशक्ति में उपादेय ऐसा जो निज परमतत्त्व का परिज्ञान...** ऐसा वापस है। ऐई! ज्ञान की पर्याय को उपादेय कहा। भाषा अलग है। ऐसा जो निज परमात्मतत्त्व का ज्ञान, ऐसा लिया है। प्रगट हुए को यहाँ ग्रहण करना और उपादेय - ऐसा लिया है। आहा..हा..! सूक्ष्म बात है।

भगवान आत्मा वस्तुस्वरूप से प्रभु सच्चिदानन्द आनन्द सिद्धस्वरूप है आत्मा। उसमें वर्तमान दशा को समस्त प्रकार से पर से छोड़कर, समस्त प्रकार से अन्तर्मुख करके। आहा..हा..! पोपटभाई! ऐसी व्याख्या है। **परद्रव्य का अवलम्बन लिए बिना निःशेषरूप...** कुछ भी बाकी रखे बिना, ऐसा कहते हैं। पूरे उपयोग को **अन्तर्मुख योगशक्ति में उपादेय...** समझ में आया? अन्दर जुड़ान होकर जो दशा प्रगट हुई, उसे यहाँ निज परमात्मतत्त्व का जानना, उसे ज्ञान कहा जाता है। देखो! ज्ञान। शास्त्र का ज्ञान, वह ज्ञान नहीं। समझ में आया? शास्त्र को पढ़ा हो और बातें करता हो कि इसका ऐसा और इसका ऐसा है, वह ज्ञान नहीं। ऐई! शान्तिभाई! शब्द नहीं, वह ज्ञान ही नहीं। आहा...!

अन्तर स्वभाव में वर्तमान अपने ज्ञान की दशा को समस्त प्रकार से अन्तर्मुख झुकाने पर, बहिर्मुख परद्रव्य का आलम्बन-लक्ष्य छोड़कर, ऐसा कहते हैं। छठवीं गाथा में ऐसा आया न, परद्रव्य का लक्ष्य छोड़कर ध्रुवस्वरूप की उपासना करने से, उपासना करने से शुद्ध ऐसा '**अभिलप्यते**' आहा..हा..! मर्म खोला है, हों! मर्म। अनुभव में आवे,

परन्तु उसकी भाषा की शैली की कथन पद्धति, उसे उस रीति से रचने की पद्धति अलौकिक! समझ में आया?

कहते हैं कि सम्यग्दर्शन-ज्ञान किसे कहना? यहाँ सम्यग्ज्ञान की पहली व्याख्या है। **परद्रव्य का अवलम्बन लिए बिना...** शास्त्र का ज्ञान हो, वह भी वास्तव में तो परद्रव्य है। शास्त्र का ज्ञान जो धारकर हुआ है, वह भी परद्रव्य है। आहाहा! ऐई! आहा..हा..! क्या कहते हैं?

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, परन्तु परद्रव्य में परद्रव्य का ज्ञान न... उसमें कहाँ आयी है यह? यह तो व्याख्या चलती है और तुम वह छन्द पकड़कर बात करते हो। परन्तु यहाँ तो परद्रव्य अर्थात् यह शास्त्र का ज्ञान, उसे परद्रव्य कहा, ऐसी व्याख्या यहाँ कहाँ है? यहाँ तो परद्रव्य को छोड़ना, इतना कहा है। परद्रव्य में विहार नहीं। परन्तु परद्रव्य की विहार की व्याख्या (क्या)?

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, कुछ का कुछ पूर्व में धारा है न, वह पकड़कर बातें करे। विशेष कहेंगे... समय हो गया, हों! (**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)